समाज विकासमाला

समर्थ रामदास

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

1453

समाज-विकास-माला : ५४

समर्थ रामदास

जीवन-परिचय और रचनाएं

GANDHI PEACE FOUNDATION
MYSORE CENTRE
162, RAMAVILAS ROAD
MYSORE-1

लेखक
श्रीपाद जोशी

संपादक
यशपाल जैन

ಕರ್ನಾಟಕ ಗಾಂಧೀ ಸ್ಮಾರಕ ನಿಧಿ (ರಿ)
ಪರಿಗ್ರಹಣ ಸಂಖ್ಯೆ:
ACC. No.: 9670
ಗಾಂಧೀ ಗ್ರಂಥಾಲಯ, ಬೆಂಗಳೂರು-1

१९५७
सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

दूसरी बार : १९५७
मूल्य
छः आना

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस,
दिल्ली

1453

GANDHI PEACE FOUNDATION
MYSORE CENTRE
162, RAMAVILAS ROAD
MYSORE-1

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा।

बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोलचाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

यह पुस्तक-माला इन्हीं बातों को सामने रखकर निकाली गई है। इसमें कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव बड़ी सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रखा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में किसी सुधार की गुंजाइश मालूम हो तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

दूसरा संस्करण

बड़े हर्ष की बात है कि इस पुस्तक का दूसरा संस्करण इतनी जल्दी प्रकाशित हो रहा है। इस माला की सभी पुस्तकें पाठकों को पसंद आ रही हैं, इससे हमें बड़ा आनंद होता है। हमें विश्वास है कि इन सामयिक और उपयोगी पुस्तकों को पाठक चाव से पढ़ेंगे और इनके प्रचार में हाथ बटाएंगे।

—मंत्री

पाठकों से

महाराष्ट्र के कई संतों के हाल और उनकी वाणी आप पढ़ चुके हैं। इस पुस्तक में वहीं के एक और ऊंचे संत का हाल पढ़ लीजिए। समर्थ रामदास अपनी कठोर साधना से आगे बढ़े थे। उन्होंने ऐसी लाभदायक बातें कहीं हैं कि आज भी उन्हें पढ़कर चित्त गद्गद् हो उठता है।

उनकी जीवनी त्याग-तपस्या का अद्भुत नमूना है और उनकी रचनाएं सबके लिए हितकारी हैं। सूर्य सबको गर्मी देता है, वर्षा सबको पानी देती है। इसी प्रकार संतों की वाणी सबके लिए होती है। जो भी चाहे, उससे लाभ उठा सकता है।

हमें आशा है कि पाठक इस पुस्तक को ध्यान से पढ़ेंगे, एक बार नहीं, बार-बार। संतों के वचन सागर के समान होते हैं। इसमें जो जितना गहरा जाता है, उतने ही कीमती रत्न पाता है।

—संपादक

समर्थ रामदास

: १ :

जन्म और बचपन

रामदास का जन्म हैदराबाद राज्य के मराठवाड़ा प्रदेश में जांब नाम के एक कस्बे में चैत्र शुक्ला ९ (रामनवमी) संवत् १६६५ (अप्रैल सन् १६०८) में दोपहर के समय, यानी ठीक भगवान् रामचंद्र के जन्म के समय हुआ था। उनके पिता का नाम सूर्याजी पंत ठोसर और माता का नाम राजूबाई था। ये जाति के देशस्थ ऋग्वेदी ब्राह्मण थे और गांव के पटवारी या मुखिया थे। सूर्याजी पंत और राजूबाई दोनों ही बड़े सुशील, धार्मिक तथा ईश्वर-भक्त थे। सूर्याजी पंत बचपन से ही बड़े भावुक भक्त और विरक्त थे। वह सूर्य भगवान् की उपासना करते थे। कहते हैं कि उन्होंने ३६ बरस तक सूर्य की उपासना की थी और सूर्य भगवान् ने प्रसन्न होकर उन्हें वर दिया था कि तुम्हारे दो पुत्र होंगे। उनके दो पुत्र हुए, जिनमें से बड़े का नाम गंगाधर था, छोटे का नारायण। यही

नारायण आगे चलकर समर्थ रामदास के नाम से मशहूर हुए।

समर्थ रामदास

रामदास बचपन में बड़े होशियार और तेज थे। जब उनकी उम्र पांच बरस की हुई तो उनको जनेऊ दिया गया और वह गुरू के पास पढ़ने जाने लगे। गुरूजी जो-कुछ पढ़ाते, उसे वह झट याद कर लेते। पढ़ाई के साथ ही खेल-कूद की तरफ भी उनका ध्यान बहुत रहता था।

पेड़ों और दीवारों पर चढ़ना, नदी-तालाबों में तैरना और अपनी उम्र के लड़कों को साथ लेकर ऊधम मचाना, उनको बहुत भाता था। इससे उनकी मां हमेशा हैरान रहती थीं। मां को हैरान देखकर वह उनसे कहते, "मां, तुम फिकर मत करो, मैं ऐसी कोई चीज नहीं करूंगा जिससे तुमको दुःख उठाना पड़े।" इस उछल-कूद का नतीजा यह हुआ कि रामदास खूब तंदुरुस्त हो गए और हर तरह की तकलीफें सहन करने की ताकत उनमें आ गई।

रामदास आठ बरस के थे तभी उनके पिता सूर्याजी-पंत का स्वर्गवास हो गया। इसलिए दोनों भाइयों के पालन-पोषण और पढ़ाई का बोझ उनकी माता राजूबाई पर आ पड़ा, जिसे उन्होंने बड़ी अच्छी तरह से निभाया।

: २ :

राम-दर्शन

रामदास के बड़े भाई गंगाधर पंत ने बचपन में ही बड़ा तप किया था। उन्होंने पढ़ाई भी अच्छी तरह की थी। इसलिए कम उम्र होते हुए भी लोग उन्हें 'श्रेष्ठ' यानी महान् कहते थे। गंगाधर पंत लोगों को उपदेश देते थे। एक बार एक आदमी को उन्होंने

उपदेश दिया। बालक नारायण ने यह देखकर उनसे आग्रह किया, "आप मुझे भी गुरूमंत्र दे दें।"

उन्होंने कहा, "भाई नारायण, तुम अभी बहुत छोटे हो, बड़े हो जाओगे तो तुमको भी मंत्र दिया जा सकेगा।"

नारायण ने बहुत हठ किया, मगर श्रेष्ठ जी ने उनकी एक न सुनी। आखिर वह नाराज होकर घर से चले गये और गांव के हनुमान-मंदिर में जा बैठे। जब हनुमान ने देखा कि यह लड़का घंटों बैठा हुआ राम का ध्यान धर रहा है तो वह नारायण से प्रसन्न

हनुमान-पूजा राम प्रकट हुए

हुए और उन्होंने पूछा, "बेटा नारायण, तेरी क्या इच्छा है ?"

गद्गद होकर नारायण ने हनुमान की जय बोली, फिर कहा, "मुझे तो बस गुरू-कृपा चाहिए !"

हनुमान हँस पड़े और उन्होंने भगवान राम का ध्यान किया। राम प्रगट हुए। नारायण ने उनके चरण पकड़ लिये। राम ने उनको ऊपर उठाकर 'गुरू-उपदेश' दिया और अंतर्धान हो गये। यह घटना संवत् १६७३ की श्रावण शुक्ला अष्टमी की है। कहते हैं कि राम ने नारायण को यह उपदेश दिया, "धर्म और समाज की हालत बहुत बिगड़ती जा रही है। तुम दोनों का सुधार और उद्धार करो। विधर्मियों ने इस देश को कुचल डाला है। इसमें तुम स्वराज्य की स्थापना करो और इस तरह लोगों का कल्याण करो।" यह भी कहा जाता है कि स्वयं राम ने ही उस समय उनका नाम बदलकर रामदास रख दिया। रामदास की जीवनी और साहित्य को देखकर हम कह सकते हैं कि धर्म और समाज के सुधार व उद्धार में उन्होंने अपने को खपा दिया और विनाश के रास्ते पर बढ़ने वाले हिंदूधर्म एवं समाज को बचा लिया।

: ३ :

घर छोड़ दिया

जब रामदास की उम्र बारह बरस की हुई तो उनकी माता को उनके विवाह की फिकर होने लगी। मगर रामदास को मामूली लोगों की तरह शादी करके घर-गिरस्ती और बाल-बच्चों में फंसना पसंद न था। उनको तो धर्म और समाज की सेवा करनी थी। इसलिए उन्होंने शादी न करने का इरादा कर लिया था। पहले तो शादी की चर्चा सुनकर रामदास घर से भाग गये, मगर उनके बड़े भाई उनको समझा-बुझाकर घर ले आये। उन्होंने रामदास की इच्छा देखकर मां को समझाया, "नारायण शादी नहीं करना चाहता, तुम उसको ब्याह के झंझट में फंसाने की कोशिश करोगी तो पछताओगी !" पर माता का दिल कहां माननेवाला था ! वह अपने मन में सोचतीं कि मेरे मर जाने के बाद इसकी सुधि कौन लेगा ? इसकी घरवाली आ जाय तो फिर मुझे फिकर नहीं रहेगी। मगर रामदास को तो सारी दुनिया की फिकर लगी हुई थी। फिर भी मां से उन्हें बहुत प्यार था। इसलिए जब मां ने बहुत जिद की तो रामदास ने इतना स्वीकार कर

लिया कि जबतक अंतरपट[1] पकड़ने की रस्म न हो जाय, तबतक मैं ब्याह से इनकार नहीं करूंगा ! मां ने सोचा, अगर नारायण अंतरपट पकड़ने तक चुप रहेगा तो फिर बाद में कोई झंझट खड़ा नहीं होगा। अंतरपट पकड़ने तक की सारी बातें पूरी हो गईं और अंतरपट पकड़कर ब्राह्मणों ने 'शुभ मंगल सावधान' कहकर मंगलाष्टक कहना शुरू किया। रामदास सावधान यानी होशियार थे ही। ये शब्द सुनते ही वह अपनेको मां के वचन से मुक्त समझकर विवाह-मंडप से भाग खड़े हुए। बहुत-से लोगों ने उनका पीछा किया, मगर वह पकड़े न जा सके और देखते-देखते गायब हो गये। इस तरह घर-गिरस्ती के फंदे से अपनी गर्दन को बचाकर रामदास ने मानो एक नई मिसाल लोगों के सामने पेश की, जिसका अनुकरण बाद में महाराष्ट्र में बहुत-से लोगों ने किया, यानी देश और समाज की सेवा के लिए ब्रह्मचारी या अविवाहित रहनेवाले लोग महाराष्ट्र में बड़ी संख्या में हुए और आज भी उनकी अच्छी-खासी तादाद मौजूद है।

---

[1] महाराष्ट्र में ब्याह के समय दूल्हा और दुलहिन के बीच एक चादर या धोती परदे की तरह तानकर पकड़ते हैं और 'मंगलाष्टक' नाम के मंत्र पढ़ते हैं। इस रस्म के अदा हो जाने के बाद ही शादी पूरी होती है।

: ४ :

तप और साधना

रामदास घर से भागकर ग्यारह दिन भगवान राम के प्रसिद्ध क्षेत्र नासिक-पंचवटी में पहुंच गये। वहां टाकली नाम के देहात के पास एक अच्छी-सी गुफा में रहने लगे। यहां गोदावरी नदी बहती है। इसी गोदावरी के पानी में घंटों खड़े रहकर गायत्री और 'श्री राम जय राम जयजयराम' का जप करना शुरू किया। सुबह से दोपहर तक वह कमरभर पानी में

कठोर साधना

खड़े रहकर जप करते; उसके बाद पंचवटी में भिक्षा

मांगते और जो-कुछ मिलता, उसीसे भगवान राम को भोग लगाकर भोजन करते और अपनी गुफा में जाकर जप-तप करने लगते। इस तपश्चर्या के साथ ही रामदास ने नासिक के वैदिक ब्राह्मणों से वेदों की शिक्षा पाई; उपनिषद्, गीता, भागवत, रामायण, महाभारत आदि ग्रंथों का अध्ययन किया और कुछ कवित्त भी लिखे। 'करुणाष्टक'[1] नाम से मशहूर इनकी कविता इसी समय की है। इस कविता में रामदास भगवान की प्राप्ति के लिए आठ-आठ आंसू रोये हैं। आज भी इस कविता को पढ़ते समय भक्तों के हृदय भर आते हैं और आंखों से आंसुओं की झड़ी लग जाती है। इनमें से पहला श्लोक इस प्रकार है :

अनुदिन अनुतापें तापलों रामराया।
परमदिन दयाला नीरसी मोहमाया॥
अचपल मन माझें नावरे आवरीतां।
तुजविण शिण होतो धांव रे धांव आतां॥

——"हे राम राजा, मैं हर रोज पश्चाताप की आग में जलता रहता हूं। हे परम दीनदयालु, तुम मेरी मोह-माया को दूर करो। मेरा मन बड़ा चंचल है, उसे रोकने

---

[1] करुणाष्टक का मतलब है अपने अवगुणों का भान होने पर पछतावे के रूप में मुंह से निकलकर भगवान की सहायता मांगनेवाली कविता।

से वह नहीं रुकता। तुम्हारे बिना मुझे बहुत ही कष्ट हो रहे हैं, तुम जल्दी दौड़कर आओ!"

यहांपर रामदास ने संवत् १६७७ से १६८९ यानी बारह बरस की उम्र से लेकर चौबीस बरस की उम्र तक लगातार तपश्चर्या की और अपने काम की बुनियाद डाली।

: ५ :

एक चमत्कार

इन्हीं दिनों की बात है। एक दिन रामदास नदी में खड़े होकर जप कर रहे थे। उसी समय कोई ब्राह्मण स्त्री सती होने जा रही थी। उसने रामदास को देखा तो पास जाकर उनको प्रणाम किया। रामदास अपने जप-जाप में मग्न थे। उन्होंने हमेशा की आदत के अनुसार आशीर्वाद दिया, "अष्टपुत्रा सौभाग्यवती भव!"—तुम्हारा सुहाग सदा बना रहे और तुम्हारे आठ लड़के हों! मगर तुरंत ही उनके ध्यान में अपनी गलती आगई और उन्होंने लोगों से उस स्त्री के पति के शव को अपने पास लाने को कहा। जब वह शव उनके पास लाया गया तो उन्होंने भगवान् राम का स्मरण करके गोदामैया का जल उसके मुंह में डाला। वह आदमी जीवित होगया और रामनाम

जपने लगा। इस स्त्री के जो पहला बेटा हुआ उसे उसने रामदास के चरणों में समर्पित कर दिया। यही आगे चलकर उद्धव गोस्वामी के नाम से मशहूर हुआ और रामदास का प्रधान शिष्य माना जाने लगा।

बारह बरस तक तपस्या और अध्ययन करने के बाद रामदास स्वामी ने सोचा कि अगर मुझे अपने धर्म और समाज की सेवा करनी है तो पहले उसकी सच्ची हालत जान लेना जरूरी है। इसलिए वह तीर्थ-यात्रा के साथ ही सारे देश का दर्शन करने निकल पड़े। संवत् १६८९ के फागुन महीने में वह तीर्थ-यात्रा के लिए निकले। उससे पहले उन्होंने टाकळी में प्रथम हनुमानजी की मूर्त्ति की स्थापना की और अपने प्रथम शिष्य उद्धव गोस्वामी को वहां रखा। लगातार बारह बरस तक सं० १७०१ तक उनका भ्रमण चलता रहा। वह काशी, प्रयाग, अयोध्या, मथुरा, वृंदावन, प्रभास, द्वारिका आदि तीर्थों में होते हुए श्रीनगर (काश्मीर) पहुंचे। वहां से बदरीनाथ, केदारनाथ और मान-सरोवर गये। फिर पूरब में जगन्नाथपुरी होते हुए दक्षिण में रामेश्वर तथा लंका चले गये। वहां से लौटते समय गोकर्ण, महाबलेश्वर, पैठण और पंढरपुर आदि क्षेत्रों के दर्शन करते हुए फिर पंचवटी-नासिक पहुंच गये। जहां-जहां गये, वहां-वहां उन्होंने भगवान

रामचंद्र या हनुमान का मंदिर या मठ स्थापित किया और उसके प्रबंध के लिए किसी अच्छे आदमी को वहां रख दिया। इससे सारे देश में उनके शिष्यों और अनुयायियों का जाल फैल गया। कहते हैं, औरंगजेब की कैद से छूटने के बाद महाराष्ट्र वापस लौटने में शिवाजी महाराज को रामदास के शिष्यों से बड़ी मदद मिली।

बारह बरस की इस तीर्थ-यात्रा के बाद रामदास समर्थ बन गये, यानी मामूली साधु-संन्यासी न रहकर उनकी महत्ता बहुत बढ़ गई। इस यात्रा में उनको अपने देश और धर्म की उस समय की बुरी हालत की पूरी जानकारी मिल गई। उनको मालूम हो गया कि लोगों को झकझोरकर जगाने की बड़ी जरूरत है और अगर लोग ऐसे ही सोते रहेंगे तो धर्म व समाज दोनों का नाश होगा।

: ६ :

माता के दर्शन : नए संप्रदाय की स्थापना

अपना काम शुरू करने से पहले रामदास अपनी मां के दर्शन और आशीर्वाद प्राप्त करने अपने घर जांब गये। इधर इनकी मां की आंखें जाती रही थीं। रामदास ने मां के चरण छूकर उनकी आंखों को स्पर्श

किया। तुरंत उनकी आंखों की रोशनी वापस लौट

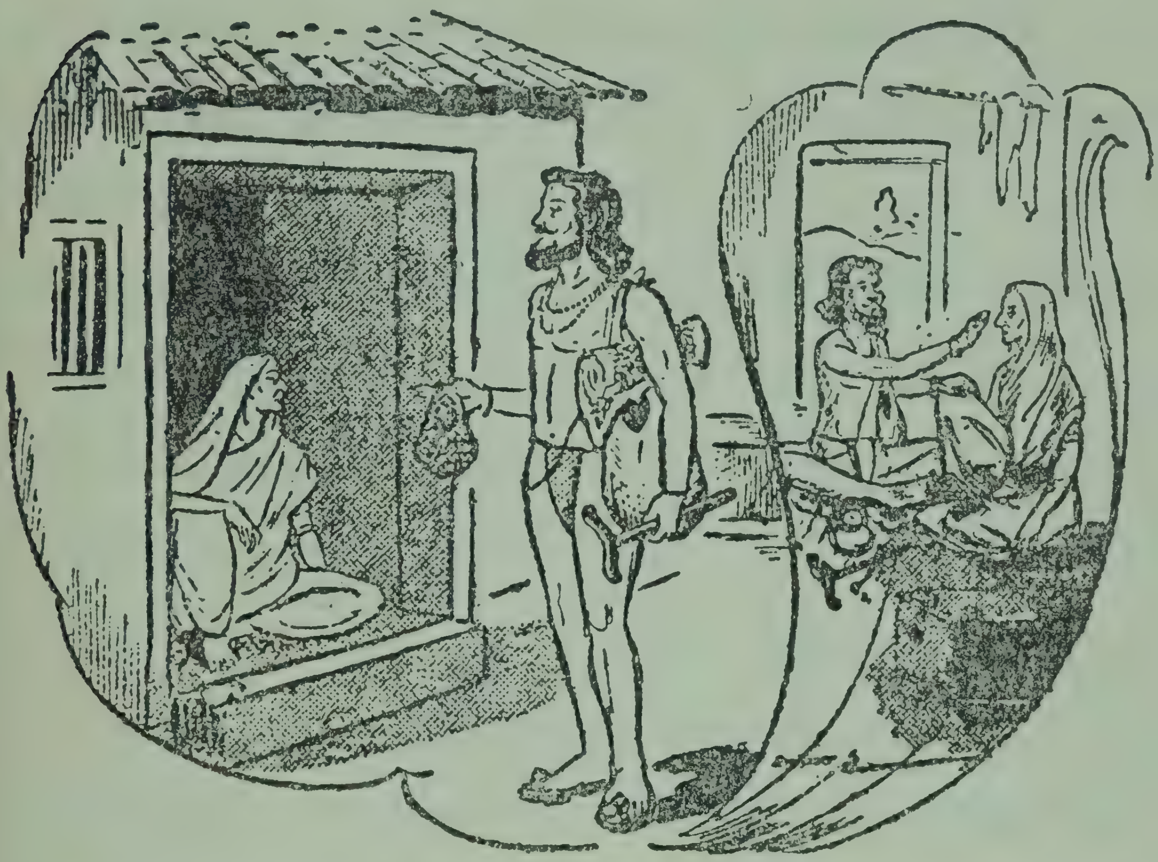

अंधी मां के दर्शनः आंखों का स्पर्श करते ही ज्योति आ गई

आई। यह चमत्कार देखकर मां बोली, "बेटा नारायण, क्या तूने किसी अच्छे भूत को अपने बस में कर लिया है ?" रामदास ने जवाब दिया, "मां, मैंने वही भूत अपने बस में कर लिया है, जो दुनिया में सबसे बड़ा है। उसका नाम रामराय है। उसीका गुणगान रामदास हमेशा करता है।"

सर्व भूतांचें हृदय। नाम त्याचें रामराय।
रामदास नित्य गाय। तेंचि भूत गे माय।

घर पर कुछ दिन रहकर समर्थ रामदास अपना

काम शुरू करने के लिए चल पड़े। इन दिनों सतारा जिले में शिवाजी महाराज ने स्वराज्य की स्थापना का झंडा खड़ा किया था। यहां से हिंदुओं के स्वराज्य का विस्तार होने जा रहा है। इसलिए नासिक-पंचवटी न जाकर कृष्णा नदी के किनारे मसूर-चाफळ के इलाके में रामदास ने अपना आसन जमाया। यहांपर उन्होंने हनुमान के ग्यारह मंदिर बनवाये और हनुमान-जयंती के उत्सव शुरू किये, जिससे लोगों में अच्छी जागृति होगई। रामदास के पास अच्छे-अच्छे जवान स्त्री-पुरुष आते, उन्हें वह अपने शिष्य बनाते और उनको अलग-अलग काम सौंप देते। रामदास का चलाया हुआ यह पंथ या संप्रदाय आजतक चला आ रहा है। इसे 'रामदासी संप्रदाय' कहते हैं। इस पंथ के लोग संन्यासी रहकर धर्म-प्रचार का काम करते हैं।

: ७ :

शिवाजी से भेंट

रामदास के कामों की खबर छत्रपति शिवाजी के कानों तक पहुंची। वह उनके पास आये और उन्हें अपना गुरू बनाया। महाराष्ट्र के इतिहास में इन गुरू-शिष्यों का सबसे बड़ा हिस्सा है। बीजापुर की आदिल-शाही सल्तनत के मराठा सरदार रामदास को गुरू मानते

थे, इसलिए कई कठिनाइयों के मौकों पर रामदास से शिवाजी महाराज को अच्छी मदद मिली। आगे भी महत्व के कामों में शिवाजी महाराज रामदास से सलाह लेते रहे।

लोगों को नसीहत देने का रामदास का तरीका बड़ा मजेदार होता था। एक बार कोई किला बन रहा था। हजारों मजदूर काम कर रहे थे। उनको देखकर शिवाजी के मन में विचार आया, "मैं कितना महान् हूं कि इतने लोगों को रोजी देता हूं।"

उनके मन में यह विचार आना था कि इतने में उन्होंने रामदास की आवाज सुनी, "जय-जय रघुवीर समर्थ !"

शिवाजी ने आगे बढ़कर रामदास के चरण छुए। स्वामीजी मुस्कराए। बोले, " शिवबा, कितने गर्व की बात है कि तुम्हारे कारण इतने लोग जी रहे हैं !"

"महाराज, यह तो आपकी कृपा है।" शिवाजी बोले।

इतने में एक बड़े-से पत्थर पर रामदास की निगाह पड़ी। उन्होंने संगतराश को बुलाकर कहा, "इस पत्थर को बीचोंबीच से काट दो।"

संगतराश ने वैसा ही किया। देखते क्या हैं कि उस पत्थर में से थोड़ा-सा पानी और एक जिंदा मेंढक

निकला। रामदास ने शिवाजी की तरफ देखा और मुस्करा दिये, मानो वह कहना चाहते थे, "देखो शिवबा, इस पत्थर में यह मेंढक कैसे जीवित रहा ! क्या इसका भी पालन-पोषण तुम्हीं करते थे ?"

शिवाजी का घमंड दूर किया

शिवाजी महाराज अपनी भूल को समझ गये और फिर से कभी घमंड के चंगुल में न फंसे।

एक बार अपने शिष्यों के साथ रामदास कहीं जा रहे थे। रास्ते में एक खेत से उनके शिष्यों ने कुछ गन्ने तोड़कर खा लिये। इतने में खेत का मालिक वहां आया। वह रामदास को पहचानता नहीं था। इसलिए उसने सोचा कि इसी बाबा ने गन्ने खाये हैं और

उनको बुरी तरह से पीटा। जब शिवाजी महाराज को इसकी खबर मिली तो उन्होंने उस खेत के मालिक को पकड़वाकर सजा देनी चाही। उसी समय रामदास वहां पहुंचे और बोले, "ठहरो राजन्, मैं बताता हूं कि इसको क्या सजा देनी चाहिए।"

"कहिये महाराज !" शिवाजी बोले।

"शिवबा, इस आदमी को वह जमीन इनाम दे दो।"

सब लोग मुंह ताकते रह गए। रामदास ने अपनी बात समझाते हुए कहा, "गुनाह तो हमारे शिष्यों ने किया था, उसकी सजा हमें भुगतनी पड़ी—यह ठीक ही हुआ। इस किसान ने अपने अधिकार की रक्षा की। इसीलिए इसको इनाम मिलना चाहिए।"

एक बार शिवाजी महाराज ने अपने सारे राज्य का दान-पत्र लिखकर रामदास की झोली में डाल दिया। शिवाजी की यह गुरूभक्ति देखकर वह बड़े गद्गद् हुए और उन्होंने कहा, "शिवबा, तुमने अपना राज तो मुझे दे दिया। अब तुम क्या करोगे ?"

"महाराज, मैं आपकी सेवा करता रहूंगा !"

रामदास ने कहा, "राजन्, राज्य चलाना तो क्षत्रियों का काम है। यह तो तुमको ही करना होगा !"

आखिर जब शिवाजी ने बहुत जिद की तो बोले, "अच्छा, तुम मेरी तरफ से राजकाज चलाओ और

दुनिया पर यह प्रकट करने के लिए कि यह राज संन्यासी का है, तुम अपना झंडा भगवा कर दो।"

शिवाजी ने उसी दिन से अपने राष्ट्रीय झंडे का रंग भगवा कर दिया।

: ८ :

देहांत

शिवाजी महाराज की मृत्यु के बाद उनके पुत्र संभाजी मराठा सल्तनत के राजा बने, मगर वह अपने पिता से बिलकुल उलटे थे। उनको नसीहत देकर सीधे मार्ग पर चलाने की रामदास ने बहुत कोशिश की, मगर कोई नतीजा न निकला। रामदास जान गये कि हवा उल्टी चल रही है। सो अंत में यह कहते हुए उन्होंने चौहत्तर बरस की उम्र में, संवत् १७३८ की माघ बदी नवमी को, सज्जनगढ़ के किले में इस दुनिया से हमेशा के लिए विदा ली--

माझी काया गेली खरें।
परि मी आहें जगदाकारें॥

"यह सही है कि मेरी देह नष्ट हो गई, पर मैं इस सारे जगत में व्याप्त हूं।"

रामदास ने अपने पीछे शिष्यों की बड़ी भारी मंडली छोड़ी थी। इन लोगों ने रामदास का कार्य

आगे चलाया और महाराष्ट्र में एक नया जोश पैदा किया, जो अबतक कायम है।

: ६ :

उनकी रचनाएं

रामदास सिर्फ बड़े महात्मा और साधु ही नहीं थे, बल्कि बहुत बड़े विद्वान, कवि, राजनीतिज्ञ और संगठनकर्त्ता भी थे। समाज को जगाकर काम के लिए तैयार करना उनके जीवन का उद्देश्य था और हर पल उन्होंने इसीमें बिताया। इसी दृष्टि से उन्होंने कुछ पुस्तकें लिखीं। इनके लिखे श्लोकों, ओवियों (साखियों), पदों आदि की संख्या छब्बीस हजार से भी ज्यादा है। रामदास का सबसे बड़ा और महत्व का ग्रंथ है 'दास-बोध'। रामदासी संप्रदाय के लोगों का यह बहुत ऊंचा ग्रंथ है। महाराष्ट्र में हजारों लोग ऐसे मिलेंगे जिन्होंने सैकड़ों-हजारों बार इस ग्रंथ का पाठ किया है। इस ग्रंथ में हमारे जीवन से संबंध रखनेवाले सभी विषयों पर रामदास ने अपने विचार प्रकट किये हैं। कोई पचास बरस तक इस ग्रंथ की रचना चलती रही। इसमें कुल ७७५१ ओवियां (साखियां) हैं। देव, धर्म, अध्यात्म आदि के साथ ही घर-गिरस्ती से संबंध रखनेवाली बातों

की भी चर्चा इसमें आई है, लेकिन वह सब ईश्वर-भक्ति के इर्द-गिर्द घूमती है। इस ग्रंथ के विषय में समर्थ अपनी मृत्यु से पहले स्वयं कहते हैं—

माझी काया आणि वाणी। गेली मृणाल अंतःकर्णी।
परि मी आहें जगज्जीवनीं। निरंतर॥
आत्माराम दासबोध। माझें स्वरूप स्वतः सिद्ध।
असतां न करावा खेद। भक्तजनीं॥

—"आप कहेंगे कि इस (रामदास) का शरीर और वाणी तो भगवान में समा गई, अब हम क्या करें? मगर आप ऐसा न सोचें, क्योंकि मैं हमेशा इस दुनिया में जीवित रहूंगा। मेरा आत्माराम 'दास-बोध' स्वयं मेरा स्वरूप है। इसलिए भक्तजन दुःख न करें।"

इस ग्रंथ में दो सौ से ज्यादा विषय आये हैं। उनमें से नमूने के रूप में 'लेखन क्रिया' नामक भाग यहां दे रहे हैं। पाठकों को पता चलेगा कि रामदास कितनी बारीकी से हरचीज को देखते थे। वह लिखते हैं:

"ब्राह्मणों को बालबोध (देवनागरी) अक्षर बहुत सुंदरता के साथ लिखने का अभ्यास होना चाहिए। उनका लेख ऐसा होना चाहिए जिसे देखकर चतुरों को आनंद हो। चमकदार स्याही से उन्हें गोल, साफ और अलग-अलग अक्षर लिखने चाहिए। जितने अक्षर हों,

वे सब स्पष्ट हों, सब शब्दों के बीच में समान अंतर हो और मात्राएं तथा रेफ आदि स्पष्ट हों। पहला अक्षर जैसा लिखा जाय, पुस्तक के आखिर तक बराबर वैसे ही अक्षर रहने चाहिए और ऐसा जान पड़े कि आदि से अंत तक एक ही कलम से लिखा गया है। अक्षरों का कालापन, कलम की मोटाई और अक्षरों का घुमाव एवं गोलाई आदि सब समान होनी चाहिए। पंक्ति के साथ पंक्ति न मिल जाय, रेफ और मात्राएं आदि एक-दूसरी को काटती हुई न हों और अक्षर इतने लंबे न हों कि नीचे के अक्षरों के साथ जा मिलें। कागज के पन्नों पर शीशे से लकीरें खींच लेनी चाहिए और तब उनपर बहुत अच्छी तरह लिखना चाहिए। सब पक्तियों में समान अंतर होना चाहिए, कहीं कम और कहीं ज्यादा नहीं होना चाहिए। लिखे हुए मजमून में कहीं सुधार करने की जरूरत न पड़नी चाहिए। भूल तो ढूंढ़ने पर भी न मिले और पढ़नेवाले को फिर लेखक से कुछ पूछने के लिए उसके पास न जाना पड़े। छोटी उम्रवालों को और भी संभालकर लिखना चाहिए, जिससे उनकी लिखावट देखकर सब लोग मोहित हो जायं। बहुत-से लोग युवावस्था में इतने छोटे अक्षर लिखते हैं, जिन्हें वे बुढ़ापे में खुद ही नहीं पढ़ सकते। इसलिए हमेशा

मझोले आकार के ही अक्षर लिखने चाहिए। पत्र के चारों ओर थोड़ी-थोड़ी जगह छोड़नी चाहिए और बीच में चमकीले अक्षर लिखने चाहिए। कागज भले ही सड़-गल जाय, पर अक्षर ज्यों-के-त्यों बने रहें। इस तरह बड़ी सावधानी से ग्रंथ लिखना चाहिए जिसे देखकर सबको वैसा ही लिखने की इच्छा हो और लोग ग्रंथ देखकर कहें कि इसके लेखक को देखना चाहिए।....मोटा कागज लाकर उसे अच्छी तरह घोटना चाहिए और लिखने की सब सामग्री बहुत अच्छी होनी चाहिए। चाकू, कैंची, लकीर खींचने की तख्ती, शीशा, घोंटा और तरह-तरह की अच्छी स्याहियां देखकर लानी चाहिए। अनेक देशों की (प्रदेशों की) चिकनी, पतली, सीधी और अनेक रंगों की किलक या लिखने की कलमें आदि रखनी चाहिए। कलम की टांक या कत बनाने की सामग्री, रेखाएं खींचने की अनेक प्रकार की सामग्री और तरह-तरह की शीशे की गोलियां आदि होनी चाहिए। इंगुर का संग्रह होना चाहिए और तरह-तरह के रंग देखकर लेने चाहिए और अनेक प्रकार की स्याहियां रुई में भिगोकर रखनी चाहिए। आखिर में जहां इतिश्री हो, वहां विदेशों से लाई हुई फलियों से खूब घोंटकर अनेक प्रकार के अच्छे-अच्छे चित्र बनाने चाहिए।

पुस्तकों को सुरक्षित रखने के लिए अनेक प्रकार के बंधन, बेठन, लाल रंग के मोमजामे, पेटियां, ताले आदि सभी चीजें होनी चाहिए।" ('दासबोध',दशक १९)

'दासबोध' के अलावा रामदास ने 'करुणाष्टक', 'जुनाट पुरुष', 'सगुण ध्यान', 'निर्गुण ध्यान', 'जन स्वभाव-गोसावी', 'एकवीस समासी', 'दो रामाया', 'चौदा ओवीशतें', 'मनाचे श्लोक' आदि कई छोटी-बड़ी किताबें लिखी हैं। अबतक उनकी लिखी सारी पुस्तकें प्रकाशित भी नहीं हो पाई हैं।

इन सबमें 'मनाके श्लोक' (मन के श्लोक) अपना खास स्थान रखते हैं। ये श्लोक इतनें सरल और भाव भरे हैं कि बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी इन्हें समझ सकते हैं। महाराष्ट्र में घर-घर इन श्लोकों का प्रचार है और हर मराठी-भाषी को कुछ-न-कुछ श्लोक जरूर याद होते हैं।

कहा जाता है कि सन् १६७८ ईसवी में एक बार रामदास के मठ में एक साथ सैकड़ों आदमी आ पहुंचे। उस समय उनके मठ में चावल बहुत कम बचे थे। जब शिष्यों ने रामदास का ध्यान इस बात की ओर खींचा तो वह बोले, "कुछ हर्ज नहीं, अभी इंतजाम किये देते हैं।" इतना कहकर उन्होंने मराठी में उसी समय कुछ श्लोक बनाये और चंद शिष्यों को

उन्हें देकर कहा, "ये श्लोक बोलते हुए जाओ और भिक्षा मांग लाओ!" शिष्यों ने ऐसा ही किया। थोड़े ही समय में उनको इतना अनाज मिल गया कि वह हजारों के लिए काफी था।

इसके बाद यह एक रिवाज-सा हो गया कि रामदासी पंथ के लोग 'मनाचे श्लोक' गाकर घर-घर जाते और भिक्षा मांगते। घर के आंगन में प्रवेश करके पहले ऊंची आवाज में एक श्लोक गाते और अंत में कहते—'जय-जय रघुवीर समर्थ!' इधर यह रिवाज कुछ कम होगया है, मगर फिर भी कुछ लोग इस तरह से आज भी भिक्षा मांगते दिखाई देते हैं। धर्म और समाज की सेवा करनेवाले रामदास-पंथी लोगों के बारे में आम जनता में जो श्रद्धा की भावना थी, उसके कारण ये लोग मामूली भिखारी नहीं, बल्कि बहुत ऊंचे दर्जे के अध्यात्मवादी पुरुष समझे जाते थे। आज भी बहुत-से लोग हर रोज इन दो सौ पांच श्लोकों में से कुछ श्लोकों का पाठ करते हैं। नमूने के रूप में कुछ श्लोक यहां दिये जाते हैं—

मना सज्जना भक्तिपंथेंचि जावें।
तरी देव तो पाविजेतो स्वभावें॥
जनीं निंद्य तें सर्व सोडोनि द्यावे।
जनीं वंद्य तें सर्व भावें करावें॥

—हे अच्छे मन, भक्ति-मार्ग से ही चलना चाहिए, तभी भगवान सहज प्रसन्न होते हैं। इस दुनिया में जितना भी निंदा करने योग्य यानी बुरा है वह सब छोड़ देना चाहिए और जो वंदन करने योग्य है उसे पूरे मन से करना चाहिए।"

मना वासना दुष्ट कामा न ये रे।
मना सर्वथा पाप बुद्धी न को रे॥
मना सर्वथा नीति सोडूं न को हो।
मना अंतरीं सार वीचार राहो॥

—रे मन, बुरी वासना नहीं रखनी चाहिए। रे मन, बिल्कुल पापबुद्धि नहीं होनी चाहिए। ऐ मन, तू कभी नीति मत छोड़। हे मन, हृदय में शाश्वत विचार रहें।

मना पाप संकल्प सोडनि द्यावा।
मना सत्यसंकल्प जीवीं धरावा॥
मना कल्पना ते न को वीषयांची।
विकारें घडे हो जनीं सर्व छीः छीः॥

—हे मन, पाप का इरादा छोड़कर सचाई का इरादा मन में रखना चाहिए, हे मन, विषय-वासनाओं की कल्पना भी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि बुरे विकारों से दुनिया में छीछालेदर होती है।"

मना श्रेष्ठ धारिष्ट जीवीं धरावें।
मना बोलणें नीच सोशीत जावें ।।
स्वयें सर्वदा नम्र वाचे वदावें।
मना सर्व लोकांसि रे नीववावें ।।

—हे मन, दिल में बड़ा धीरज रखना चाहिए, और लोगों की नीच बातें बर्दाश्त करते हुए स्वयं अपने मुंह से हमेशा नम्र बातें करके सब लोगों को संतुष्ट करना चाहिए।

तनू त्यागितां कीर्ति मागें उरावी।
मना सज्जना हेचि क्रीया धरावी ।।
मना चंदनाचे परी त्वां झिजावें।
परी अंतरीं सज्जना नीववावें ।।

—हे भले मन, हम ऐसा काम करें, जिससे मरने के बाद अच्छा नाम बाकी रहे। हे मन, तुम चंदन की तरह घिसते रहो मगर सज्जनों के दिल खुश रखो।

जनीं सर्व सूखी असा कोण आहे।
विचारें मना तूंचि शोधूनि पाहे ।।
मना त्वांचि रे पूर्वसंचीत केलें।
तया सारिखें भोगणें प्राप्त झालें ।।

—हे मन, तुम सोचकर यह खोज देखो कि इस दुनिया में सब तरह से सुखी कौन है? रे मन, तुमने पूर्व जन्म में जो-कुछ कर्म किया था उसीके

अनुसार भुगतना पड़ रहा है।"

समर्थाचिया सेवका वक्र पाहे।
असा सर्व भूमंडलीं कोण आहे ॥
जयाची लिला वर्णिती लोक तीन्ही
नुपेक्षी कदा राम दासाभिमानी ॥

—सारे संसार में ऐसा कौन है, जो समर्थ के सेवक को बुरी निगाह से देखे? जिनकी लीला का बखान तीनों लोक करते हैं, ऐसे दासाभिमानी भगवान राम-चंद्रजी अपने भक्त की उपेक्षा कभी नहीं करते।"

सदा चक्रवाकासि मार्तंड जैसा।
उडी घालितो संकटीं स्वामी तैसा ॥
हरि भक्ति चा घाव गाजे निशाणीं।
नुपेक्षी कदा राम दासाभिमानी ॥

—जिस तरह चकवे की मदद के लिए सूरज दौड़ आता है, उसी तरह भगवान अपने सेवकों के संकट में कूद पड़ता है। हरिभक्ति का आघात डंके की चोट की तरह बज उठता है। दासाभिमानी राम अपने भक्तों की कभी उपेक्षा नहीं करता।

मना सज्जना एक जीवीं धरावे।
जनीं आपुलें हीन तूवां करावें ॥
रघुनायकावीण बोलो न को हो।
सदा मानसीं तो निजध्यास राहो ॥

1453

—हे सज्जन मन, एक बात याद रक्खो। दुनिया में तुम अपना हित करते रहो। इसका उपाय है भगवान की भक्ति। तुम रघुनाथ के अतिरिक्त कुछ भी मत बोलो और हमेशा अपने दिल में भगवान का चिंतन-मनन करते रहो।

मना रे जनीं मौन मुद्रा धरावी।
कथा आदरें राघवाची करावी॥
नसे राम तें धाम सोडूनि धावें।
सुखा लागिं आरण्य सेवीत जावें॥

—रे मन, इस संसार में चुप रहना चाहिए और आदर के साथ रामजी की कथा कहनी-सुननी चाहिए। जिस घर में राम न हो उसे छोड़कर सुख के लिए जंगल में जाना चाहिए।"

सदा सेवि आरण्य तारुण्य काळीं।
मिळेना कदा कल्पनेचेनि मेळीं॥
चळेना मनीं निश्चयो दृढ़ ज्याचा।
जगीं धन्य तो दास सर्वोत्तमाचा॥

—जो अपनी जवानी में हमेशा जंगलों में रहता है, विषय-वासना के विचारों में नहीं फंसता और जिसका पक्का निश्चय कभी ढीला नहीं पड़ता वह सर्वोत्तम यानी भगवान का दास इस दुनिया में बड़ा धन्य है।"

ACC. No.: 9670

समाज-विकास-माला की पुस्तकें

१. बद्रीनाथ
२. जंगल की सैर
३. भीष्म पितामह
४. शिवि और दधीचि
५. विनोबा और भूदान
६. कबीर के बोल
७. गांधीजी का विद्यार्थी-जीवन
८. गंगाजी
९. गौतम बुद्ध
१०. निषाद और शबरी
११. गांव सुखी, हम सुखी
१२. कितनी जमीन ?
१३. ऐसे थे सरदार
१४. चैतन्य महाप्रभु
१५. कहावतों की कहानियां
१६. सरल व्यायाम
१७. द्वारका
१८. बापू की बातें
१९. बाहुबली और नेमिनाथ
२०. तंदुरुस्ती हजार नियामत
२१. बीमारी कैसे दूर करें ?
२२. माटी की मूरत जागी
२३. गिरिधर की कुंडलियां
२४. रहीम के दोहे
२५. गीता-प्रवेशिका
२६. तुलसी-मानस-मोती
२७. दादू की वाणी
२८. नजीर की नज्में
२९. संत तुकाराम
३०. हजरत उमर
३१. बाजीप्रभु देशपांडे
३२. तिरुवल्लुवर
३३. कस्तूरबा गांधी
३४. शहद की खेती
३५. कावेरी
३६. तीर्थराज प्रयाग
३७. तेल की कहानी
३८. हम सुखी कैसे रहें ?
३९. गो-सेवा क्यों ?
४०. कैलास-मानसरोवर
४१. अच्छा किया या बुरा ?
४२. नरसी मेहता
४३. पंढरपुर
४४. ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती
४५. संत ज्ञानेश्वर
४६. धरती की कहानी
४७. राजा भोज
४८. ईश्वर का मंदिर
४९. गांधीजी का संसार-प्रवेश
५०. ये थे नेताजी
५१. रामेश्वरम्
५२. कब्रों का विलाप
५३. रामकृष्ण परमहंस
५४. समर्थ रामदास
५५. मीरा के पद
५६. मिल-जुलकर काम करो
५७. कालापानी
५८. पावभर आटा

मूल्य प्रत्येक का छः आना

५४

छः आना

सस्ता साहित्य मण्डल